Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत विभाजन एवं कारण, मानवीय त्रासदी और दीर्घकालिक प्रभाव

डॉ. सचिन कुमार*

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) डी.ए.वी.कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – 15 अगस्त 1947 को भारत ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की, परंतु यह स्वतंत्रता एक भयावह विभाजन के साथ आई। भारतीय उपमहाद्वीप का दो राष्ट्रों–भारत और पाकिस्तान–में विभाजन आधुनिक इतिहास की सबसे बड़ी मानवीय त्रासदियों में से एक थी। यह विभाजन उपनिवेशवाद की समाप्ति की सबसे रक्तरंजित घटनाओं में से एक था। दो महीने के भीतर डेढ़ करोड़ से अधिक लोग विस्थापित हुए और दस लाख से अधिक लोगों की हत्या हुई। यह विस्थापन इतिहास का सबसे बड़ा जबरन प्रवासन था, जिसने करोड़ों लोगों के जीवन को स्थायी रूप से बदल दिया।

शब्द कुंजी –विभाजन, द्वि–राष्ट्र सिद्धान्त, माउंटबेटन योजना, रैडक्लिफ रेखा, मुस्लिम लीग।

शोध का उद्देश्य : इस शोध पत्र का उद्देश्य भारत विभाजन के बहुआयामी पहलुओं का गहन अध्ययन करना है। यह अध्ययन तीन मुख्य प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करता है: प्रथम, विभाजन के ऐतिहासिक और राजनीतिक कारण क्या थे ? द्वितीय, विभाजन से उत्पन्न मानवीय त्रासदी का स्वरूप क्या था ? तृतीय, विभाजन के दीर्घकालिक प्रभाव क्या रहे हैं ? इन प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए यह शोध पत्र प्रामाणिक अकादमिक स्रोतों, ऐतिहासिक दस्तावेजों और विद्वानों के शोध कार्यों का उपयोग करता है। विशेष रूप से उर्वशी बुटालिया, यासमीन खान, आयशा जलाल और ग्यानेंद्रपांडे जैसे प्रतिष्ठित इतिहासकारों के कार्य इस अध्ययन का आधार हैं।

विभाजन का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इसकी छाया आज भी दक्षिण एशिया की राजनीति और समाज पर पड़ती है। भारत और पाकिस्तान के बीच के संबंध, कश्मीर का विवाद, दोनों देशों में अल्पसंख्यकों की स्थिति–ये सभी विभाजन की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष विरासत हैं। इस ऐतिहासिक घटना को समझना वर्तमान की चुनौतियों को समझने के लिए आवश्यक है।

शोध विधि : प्रस्तुत शोधपत्र विश्लेषात्मक एवं वर्णनात्मक विधि पर आधारित है। इस शोधपत्र में द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। इन स्रोतों का संदर्भ ग्रहण करते हुए वर्णनात्मक व्याख्या तथा सार्थक निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है।

भारत विभाजन की जड़ें ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों में खोजी जा सकती हैं। अंग्रेजों ने भारत में अपने शासन को बनाए रखने के लिए 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाई।[1] इस नीति के तहत हिंदुओं और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिक विभाजन को बढ़ावा दिया गया। ब्रिटिश शासन से पहले भारत में हिंदू और मुसलमान शताब्दियों से साथ रहते आए थे, परंतु अंग्रेजों ने इन दो समुदायों के बीच के अंतरों को राजनीतिक स्वरूप प्रदान किया।

1905 में बंगाल का विभाजन इसी नीति का एक प्रमुख उदाहरण था, जिसका उद्देश्य मुस्लिम–बहुल पूर्वी बंगाल और हिंदू–बहुल पश्चिमी बंगाल को अलग करके राष्ट्रवादी आंदोलन को कमजोर करना था।[2] वायसराय लॉर्ड कर्जन ने इस विभाजन को प्रशासनिक सुविधा के नाम पर किया, परंतु वास्तविक उद्देश्य बढ़ते राष्ट्रवादी आंदोलन को विभाजित करना था। यद्यपि जनविरोध के कारण यह विभाजन 1911 में वापस ले लिया गया, परंतु इसने सांप्रदायिक राजनीति का बीज बो दिया था।

1909 के मॉर्ले – मिंटो सुधारों में पृथक निर्वाचन प्रणाली की शुरुआत की गई, जिसने धार्मिक आधार पर राजनीतिक प्रतिनिधित्व को संस्थागत रूप दिया।[3] इस व्यवस्था ने मुसलमानों के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र स्थापित किए, जिससे राजनीतिक पहचान धार्मिक रेखाओं पर विभाजित होने लगी। इस प्रणाली ने यह धारणा पुष्ट की कि हिंदू और मुसलमान के राजनीतिक हित अलग–अलग हैं और उन्हें अलग–अलग प्रतिनिधित्व की आवश्यकता है। बाद के वर्षों में यह विभाजन और गहरा होता गया और अंतत: विभाजन की पृष्ठभूमि तैयार हुई।

द्वि–राष्ट्र सिद्धांत भारत विभाजन की वैचारिक नींव था। इस सिद्धांत के अनुसार, हिंदू और मुसलमान दो अलग–अलग राष्ट्र हैं और इसलिए वे एक साथ नहीं रह सकते।[4] आयशा जलाल के अनुसार, मुहम्मद अली जिन्ना ने इस सिद्धांत का उपयोग मुसलमानों के राजनीतिक हितों को सुरक्षित करने के लिए किया। यह सिद्धांत दावा करता था कि धर्म के आधार पर सांस्कृतिक और सामाजिक भिन्नताएँ इतनी गहरी हैं कि एक राष्ट्र में सह–अस्तित्व संभव नहीं है। 1906 में अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की स्थापना हुई, जिसने धीरे–धीरे मुसलमानों के पृथक राजनीतिक प्रतिनिधित्व की माँग को मजबूत किया।

1940 के लाहौर अधिवेशन में मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान प्रस्ताव

पारित किया, जिसमें भारत के उत्तर-पश्चिमी और पूर्वी मुस्लिम-बहुल क्षेत्रों में स्वतंत्र राज्यों की माँग की गई।[5] जिन्ना ने 1940 के अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिंदू और मुसलमान का धर्म, दर्शन, सामाजिक रीति-रिवाज और साहित्य अलग-अलग हैं। उन्होंने तर्क दिया कि इतने भिन्न समुदायों को एक राष्ट्र में बाँधना केवल असंतोष पैदा करेगा।[6] उन्होंने कहा कि हिंदू और मुस्लिम अलग-अलग धार्मिक दर्शन, सामाजिक रीति-रिवाजों और साहित्य के अनुयायी हैं। उनके विवाह और उत्तराधिकार के नियम भिन्न हैं। वे न एक साथ विवाह करते हैं, न एक साथ भोजन करते हैं।

हालाँकि, आयशा जलाल का मत है कि जिन्ना वास्तव में विभाजन नहीं चाहते थे; वे केवल भारतीय संघ में मुसलमानों के लिए समानता और सुरक्षा चाहते थे।[7] जलाल के अनुसार, पाकिस्तान की माँग एक सौदेबाजी की रणनीति थी, जिसका उद्देश्य कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार पर दबाव बनाना था। जिन्ना एक ऐसे ढीले संघ की कल्पना करते थे जिसमें मुसलमान बहुल प्रांतों को स्वायत्तता हो। परंतु परिस्थितियाँ इस प्रकार विकसित हुईं कि यह माँग वास्तविकता में बदल गई और जिन्ना को स्वयं 'कटा-फटा' पाकिस्तान स्वीकार करना पड़ा।

1946 के प्रांतीय चुनावों ने विभाजन की दिशा में निर्णायक भूमिका निभाई। इन चुनावों में मुस्लिम लीग ने मुस्लिम सीटों पर अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की, जिससे उसका दावा मजबूत हुआ कि वही भारतीय मुसलमानों की एकमात्र प्रतिनिधि है।[8] मुस्लिम लीग ने केंद्रीय विधान सभा की सभी 30 मुस्लिम सीटें जीतीं और प्रांतों में भी अधिकांश मुस्लिम सीटों पर विजय प्राप्त की। कांग्रेस ने सामान्य सीटों पर बहुमत प्राप्त किया, परंतु दोनों दलों के बीच सत्ता-साझेदारी पर कोई सहमति नहीं बन सकी। कैबिनेट मिशन की योजना को लेकर मतभेद और बढ़ गए।

16 अगस्त 1946 को मुस्लिम लीग ने 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस' का आह्वान किया। कलकत्ता में इस दिन भयानक सांप्रदायिक दंगे भड़के, जिन्हें 'कलकत्ता हत्याकांड' या 'ग्रेट कलकत्ता किलिंग' के नाम से जाना जाता है।[9] चार दिनों में पाँच से दस हजार लोग मारे गए और पंद्रह हजार से अधिक घायल हुए। दोनों समुदायों ने एक-दूसरे पर हमले किए। घरों में आग लगाई गई, दुकानें लूटी गईं और निर्दोष नागरिकों की हत्या की गई। उर्वशी बुटालिया के अनुसार, इस हिंसा ने स्पष्ट कर दिया कि हिंदू-मुस्लिम एकता असंभव होती जा रही थी। कलकत्ता से हिंसा नोआखाली, बिहार और अन्य क्षेत्रों में फैल गई।

मार्च 1947 में लॉर्ड माउंटबेटन अंतिम वायसराय के रूप में भारत आए। उन्होंने शीघ्र ही निष्कर्ष निकाला कि विभाजन अपरिहार्य है।[10] माउंटबेटन को निर्देश था कि वे भारत से ब्रिटिश शासन की शांतिपूर्ण वापसी सुनिश्चित करें। उन्होंने पाया कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच समझौता संभव नहीं था और गृहयुद्ध का खतरा मंडरा रहा था। 3 जून 1947 को माउंटबेटन योजना की घोषणा हुई, जिसमें भारत का विभाजन और 15 अगस्त 1947 को सत्ता हस्तांतरण निश्चित किया गया। यह तिथि मूल योजना से एक वर्ष पहले थी, जिससे विभाजन की तैयारी के लिए बहुत कम समय बचा।

सीमा निर्धारण का कार्य ब्रिटिश वकील सर सिरिल रैडक्लिफ को सौंपा गया, जो इससे पहले कभी भारत नहीं आए थे और जिन्हें भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक, सामाजिक या सांस्कृतिक वास्तविकताओं का कोई ज्ञान नहीं था।[11] उन्हें केवल पाँच सप्ताह का समय दिया गया था यह एक ऐसे कार्य के लिए जो करोड़ों लोगों के भाग्य का निर्धारण करने वाला था। रैडक्लिफ के पास अपूर्ण जनगणना आँकड़े और अशुद्ध नक्शे थे। उन्हें स्थानीय परिस्थितियों का भी कोई ज्ञान नहीं था। बुटालिया बताती हैं कि यह जल्दबाजी और अज्ञानता आने वाली त्रासदी का प्रमुख कारण बनी।

रैडक्लिफ रेखा की घोषणा 17 अगस्त 1947 को हुई, यानी स्वतंत्रता के दो दिन बाद।[12] इस विलंब का अर्थ था कि लोग स्वतंत्रता के दिन तक नहीं जानते थे कि वे किस देश में रहेंगे। खान के अनुसार, इस सीमा ने गाँवों को विभाजित किया, परिवारों को अलग किया और सदियों से स्थापित आर्थिक एवं सामाजिक संबंधों को तोड़ दिया। सिंचाई नहरें एक देश में और खेत दूसरे में, रेलवे लाइनें कटीं, बाजार अपने ग्राहकों से अलग हुए।

विभाजन ने इतिहास का सबसे बड़ा जबरन प्रवासन उत्पन्न किया। लगभग डेढ़ करोड़ से दो करोड़ लोग अपने घरों से विस्थापित हुए।[13] मुसलमान पाकिस्तान की और और हिंदू तथा सिख भारत की ओर गए। यह विस्थापन कोई व्यवस्थित प्रक्रिया नहीं थी; लोग जान बचाने के लिए भागे। कुछ पैदल चले, कुछ बैलगाड़ियों में, कुछ रेलगाड़ियों में। बुटालिया लिखती हैं कि शरणार्थी काफिले कई मील लंबे थे-भूखे, प्यासे, थके हुए लोगों की अंतहीन कतारें।

पंजाब में सबसे अधिक विस्थापन हुआ क्योंकि यह प्रांत बीच से विभाजित हुआ था। यासमीन खान बताती हैं कि भारतीय पंजाब की लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या पलायन कर गई और 16 प्रतिशत नए शरणार्थी आए।[14] पाकिस्तानी पंजाब में स्थिति इसके विपरीत थी। दिल्ली में शरणार्थियों की बाढ़ आ गई; एक समय शहर की एक चौथाई आबादी शरणार्थी थी। पुरानी दिल्ली की संकरी गलियाँ और खुले मैदान शरणार्थियों से भर गए। शरणार्थी शिविरों में भीड भाड़, अस्वच्छता और बीमारियाँ फैलीं। हैजा, मलेरिया, टाइफाइड, प्लेग जैसी बीमारियों ने हजारों लोगों की जान ली।

विभाजन के साथ भयावह सांप्रदायिक हिंसा हुई। विभिन्न अनुमानों के अनुसार, दो लाख से बीस लाख लोग मारे गए।[15] बुटालिया के अनुसार, सटीक आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं क्योंकि अराजकता के उस दौर में कोई व्यवस्थित रिकॉर्ड नहीं रखा गया। मृतकों की गिनती करने वाला कोई नहीं था। हिंसा का स्वरूप अत्यंत क्रूर था-सामूहिक हत्याएँ, आगजनी, लूटपाट और अत्याचार। लोगों को जिंदा जलाया गया, कुओं में फेंका गया, ट्रेनों में काट डाला गया।

पंजाब में हिंसा सबसे तीव्र थी क्योंकि यहाँ तीन समुदाय - हिंदू, मुस्लिम और सिख- आपस में उलझे हुए थे। जोया चटर्जी बताती हैं कि रेलगाड़ियाँ शवों से भरी सीमा पर आती थीं।[16] 'भूतिया ट्रेनें'-जिनमें सभी यात्री मारे जा चुके थे-एक डरावनी वास्तविकता बन गईं। शरणार्थी काफिलों पर हमले होते थे। गाँव-के-गाँव जला दिए जाते थे। हिंसा में धार्मिक स्थल भी नहीं बचे-मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारे नष्ट किए गए।

खान लिखती हैं कि यह हिंसा केवल उन्माद नहीं थी; इसमें संगठित तत्वों की भूमिका थी।[17] द्वितीय विश्वयुद्ध से लौटे पूर्व सैनिक जो हथियारों से लैस थे और जिन्हें हिंसा का प्रशिक्षण मिला था, उन्होंने संगठित हमलों का नेतृत्व किया। कुछ स्थानों पर स्थानीय प्रशासन और पुलिस भी हिंसा में शामिल थी या तटस्थ रही। इस संगठित हिंसा के कारण मृत्यु दर बहुत ऊँची थी।

विभाजन की त्रासदी में महिलाओं की पीड़ा सबसे मर्मांतक पहलू था। अनुमानतः पचहत्तर हजार से एक लाख महिलाओं का अपहरण और बलात्कार

हुआ।[18] बुटालिया का शोध बताता है कि महिलाओं को सामुदायिक 'इज्जत' का प्रतीक माना गया और उन्हें दूसरे समुदाय को अपमानित करने का साधन बनाया गया। महिलाओं के शरीरों पर धार्मिक चिह्न गोदे गए–हिंदू महिलाओं पर 'पाकिस्तान जिंदाबाद' और मुस्लिम महिलाओं पर 'जयहिंद' या धार्मिक प्रतीक। यह एक भयावह प्रकार की सांकेतिक हिंसा थी जिसमें महिला शरीर युद्ध का मैदान बन गया।

कई परिवारों ने अपनी महिलाओं को 'सम्मान' बचाने के लिए स्वयं मार डाला या उन्हें आत्महत्या के लिए मजबूर किया।[19] ग्यानेंद्र पांडे बताते हैं कि पंजाब के थोआ खालसा गाँव में नब्बे सिख महिलाओं ने कुएँ में कूद कर जान दे दी ताकि वे 'अपवित्र' न हों। इस घटना को बाद में 'शहादत' के रूप में महिमा मंडित किया गया, जो महिलाओं के प्रति समाज के पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण को उजागर करता है। महिलाओं की 'इज्जत' को उनके जीवन से अधिक मूल्यवान माना गया।

विभाजन के बाद दोनों सरकारों ने अपहृत महिलाओं को पुन: प्राप्त करने का अभियान चलाया। परंतु इस प्रक्रिया में भी महिलाओं की इच्छा को नजरअंदाज किया गया।[20] कई महिलाएँ जो नई जगह बस गई थीं, जिनके बच्चे हो गए थे, उन्हें जबरन 'वापस' भेजा गया। उनकी नई पहचान, उनके नए परिवार, उनके बच्चे–सब कुछ छीन लिया गया। खान के अनुसार, यह 'पुनर्वास' अक्सर एक और विस्थापन था, एक और त्रासदी। महिलाओं को वस्तु की तरह व्यवहार किया गया जिन्हें 'अपने' समुदाय को लौटाना था।

विभाजन की त्रासदी में अनगिनत बच्चे अपने परिवारों से बिछड़ गए। कई बच्चों ने अपने माता–पिता, भाई–बहनों को मरते देखा।[21] बुटालिया के साक्षात्कारों में ऐसे लोग मिलते हैं जो बचपन में अनाथ हो गए और जिन्हें अपनी वास्तविक पहचान का पता दशकों बाद चला। कुछ बच्चों को दूसरे धर्म के परिवारों ने पाला और उनकी धार्मिक पहचान बदल दी गई। वे बड़े होकर एक धर्म के मानते रहे जबकि उनका जन्म दूसरे धर्म में हुआ था। यह पहचान का संकट उनके पूरे जीवन में बना रहा।

कुछ बच्चे भीड़ में खो गए और कभी नहीं मिले। परिवारों ने दशकों तक अपने खोए हुए बच्चों को खोजा। कुछ ने सीमा पार संपर्क स्थापित किए, कुछ ने विज्ञापन दिए, कुछ ने सरकारी एजेंसियों की मदद माँगी। अधिकांश मामलों में यह खोज असफल रही। विभाजन की यह चोट– परिवार का बिखरना, बच्चों का खो जाना–शायद सबसे गहरी थी।

विभाजन ने केवल शारीरिक पीड़ा नहीं दी, बल्कि गहरा मनोवैज्ञानिक आघात भी पहुँचाया। जिन लोगों ने अपने प्रियजनों को मरते देखा, हिंसा का सामना किया, अपना घर छोड़ा–वे आजीवन इस आघात से जूझते रहे। कई लोगों में अवसाद, चिंता और आघात– पश्चात तनाव विकार के लक्षण देखे गए। परंतु उस समय मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा बहुत सीमित थी और कोई पेशेवर सहायता उपलब्ध नहीं थी। विभाजन की स्मृतियाँ परिवारों में पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित हुईं। बच्चों ने अपने माता–पिता और दादा–दादी से विभाजन की कहानियाँ सुनीं। यह 'द्वितीयक आघात' या 'अंतर–पीढ़ी आघात' का उदाहरण है जहाँ बाद की पीढ़ियाँ भी पूर्वजों के अनुभवों से प्रभावित होती हैं। विभाजन की स्मृति दक्षिण एशिया की सामूहिक चेतना का हिस्सा बन गई

विभाजन के सबसे स्थायी प्रभावों में से एक भारत और पाकिस्तान के बीच का तनावपूर्ण संबंध है। दोनों देशों के बीच 1947, 1965 और 1971 में युद्ध हुए और 1999 में कारगिल संघर्ष हुआ।[22] जलाल के अनुसार, विभाजन ने दोनों देशों की राष्ट्रीय पहचान को' दूसरेय के विरोध में परिभाषित किया। पाकिस्तान के लिए भारत और भारत के लिए पाकिस्तान 'शत्रुराष्ट्र' बन गया। दोनों देशों में राष्ट्रवाद अक्सर दूसरे देश के विरोध के माध्यम से व्यक्त होता है।

कश्मीर विवाद विभाजन की सबसे जटिल विरासत है। विभाजन के समय कश्मीर एक रियासत था जिसके शासक हिंदू थे परंतु बहुसंख्यक जनसंख्या मुस्लिम थी।[23] खान बताती हैं कि कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने प्रारंभ में स्वतंत्र रहने का निर्णय लिया, परंतु अक्टूबर 1947 में पाकिस्तान समर्थित कबायली आक्रमण के बाद उन्होंने भारत में विलय किया। भारतीय सेना ने आक्रमणकारियों को खदेड़ा, परंतु युद्ध संयुक्त राष्ट्र द्वारा युद्धविराम तक जारी रहा। तब से कश्मीर दोनों देशों के बीच विवाद का केंद्र बना हुआ है।

आज दोनों देश परमाणु शक्ति संपन्न हैं, जिसने इस विवाद को वैश्विक चिंता का विषय बना दिया है। नियंत्रण रेखा पर गोलीबारी, आतंकवाद के आरोप–प्रत्यारोप और कूटनीतिक तनाव निरंतर बने रहते हैं। विभाजन के सात दशक से अधिक समय बाद भी दोनों देश सामान्य संबंध स्थापित नहीं कर पाए हैं।

विभाजन के शरणार्थियों का पुनर्वास दोनों देशों के लिए विशाल चुनौती था। भारत में दिल्ली, पंजाब, बंगाल और अन्य क्षेत्रों में शरणार्थी बस्तियाँ बनीं जो आज भी उन शहरों का हिस्सा हैं।[24] बुटालिया बताती हैं कि दिल्ली में लाजपतनगर, राजौरीगार्डन, पटेलनगर जैसे क्षेत्र शरणार्थी शिविरों से विकसित हुए। कलकत्ता में भी बड़ी संख्या में शरणार्थी बसे। शरणार्थियों ने नए स्थानों पर व्यापार, उद्योग और सेवाओं में महत्वपूर्ण योगदान दिया और नए शहरों की अर्थव्यवस्था को आकार दिया।

पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) से पश्चिम बंगाल में शरणार्थियों का आना दशकों तक जारी रहा। 1971 के बांग्लादेश मुक्तिसंग्राम ने एक और बड़ी शरणार्थी लहर उत्पन्न की।[25] पांडे के अनुसार, इस निरंतर प्रवास ने पश्चिम बंगाल की जनसांख्यिकी और राजनीति को गहराई से प्रभावित किया। शरणार्थियों का पुनर्वास एक सतत प्रक्रिया बनी रही और इसके सामाजिक–आर्थिक प्रभाव आज भी महसूस किए जाते हैं।

विभाजन के बावजूद, दोनों देशों में महत्वपूर्ण धार्मिक अल्पसंख्यक बचे रहे। भारत में मुसलमान और पाकिस्तान में हिंदू एवं सिख। इन अल्पसंख्यकों की स्थिति विभाजन की एक निरंतर विरासत है। दोनों देशों में सांप्रदायिक तनाव समय–समय पर उभरता रहा है और अल्पसंख्यकों को अक्सर 'दूसरेय देश का समर्थक माना जाता है।

भारत में, जहाँ मुसलमान आबादी का लगभग 14 प्रतिशत हैं, उन्हें कभी–कभी 'पाकिस्तान जाओय जैसी टिप्पणियों का सामना करना पड़ता है। पाकिस्तान में हिंदू आबादी जो विभाजन के समय 20 प्रतिशत थी, अब 2 प्रतिशत से भी कम है। यह गिरावट निरंतर पलायन और धर्मांतरण का परिणाम है। विभाजन ने दोनों देशों में 'बहुसंख्यकवाद' की राजनीति को जन्म दिया।

विभाजन की स्मृति दोनों देशों में अलग–अलग ढंग से संरक्षित और व्याख्यायित की गई है। भारत में विभाजन को प्राय: ब्रिटिश षड्यंत्र और मुस्लिम लीग की जिद का परिणाम बताया जाता है, जबकि पाकिस्तान में इसे मुसलमानों की 'मुक्ति' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।[26] खान के अनुसार, दोनों देशों में विभाजन की हिंसा को राष्ट्रीय इतिहास की पाठ्य पुस्तकों में

कम महत्व दिया गया है। दोनों पक्ष अपनी त्रासदी को याद करते हैं, दूसरे पक्ष द्वारा किए गए अत्याचारों को उजागर करते हैं, परंतु अपने समुदाय द्वारा की गई हिंसा को प्राय: अनदेखा करते हैं। परंतु व्यक्तिगत और पारिवारिक स्मृतियों में विभाजन की पीड़ा जीवित है। बुटालिया के मौखिक इतिहास परियोजना ने इन छिपी हुई कहानियों को सामने लाया।[27] उनका शोध बताता है कि विभाजन के गवाह परिवारों में इस विषय पर अक्सर मौन रहा , परंतु यह मौन पीड़ा के विस्मरण का नहीं, बल्कि उसकी गहराई का प्रतीक था। दशकों बाद भी बहुत से लोग विभाजन की घटनाओं को याद करते हुए भावुक हो जाते हैं । यह आघात इतना गहरा है कि उसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है।

हाल के वर्षों में विभाजन की स्मृति को संरक्षित करने के प्रयास बढ़े हैं। मौखिक इतिहास परियोजनाएँ, संग्रहालय, वृत्तचित्र और साहित्य के माध्यम से इस त्रासदी को दर्ज किया जा रहा है। 2017 में अमृतसर में विभाजन संग्रहालय खोला गया, जो इस घटना का पहला औपचारिक स्मारक है। ये प्रयास महत्वपूर्ण हैं क्योंकि विभाजन के प्रत्यक्षदर्शी अब बूढ़े हो रहे हैं और उनकी गवाहियाँ जल्द ही खो जाएँगी।

निष्कर्ष – भारत विभाजन बीसवीं सदी की सबसे त्रासदीपूर्ण घटनाओं में से एक था। इसके कारण जटिल और बहुआयामी थे–ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियाँ, सांप्रदायिक राजनीति का उदय, द्वि–राष्ट्रसिद्धांत, राजनीतिक नेतृत्व की विफलताएँ और जल्दबाजी में किया गया सत्ता हस्तांतरण। खान के शब्दों में, विभाजन केवल एक राजनीतिक घटना नहीं थी, बल्कि करोड़ों लोगों के जीवन में एक भूकंप था। यइस भूकंप की तरंगें आज भी महसूस की जा सकती हैं।

विभाजन की मानवीय त्रासदी का आकार अकल्पनीय था। डेढ़ करोड़ से अधिक लोगों का विस्थापन, दस से बीस लाख लोगों की हत्या, पचहत्तर हजार से अधिक महिलाओं का अपहरण–ये केवल संख्याएँ नहीं हैं, बल्कि अगणित मानवीय पीड़ाओं की कहानियाँ हैं। हर संख्या के पीछे एक इंसान था–अपने सपनों, अपने प्रियजनों, अपने घर के साथ। परिवार टूटे, समुदाय बिखरे, पीढ़ियों पुराने संबंध समाप्त हुए। महिलाओं पर अकथनीय अत्याचार हुए, बच्चे अनाथ हुए, बूढ़े निराश्रित हुए। इस त्रासदी के घाव आज भी पूरी तरह नहीं भरे हैं ।

विभाजन के दीर्घकालिक प्रभाव आज भी दक्षिण एशिया की राजनीति और समाज को आकार दे रहे हैं। भारत–पाकिस्तान के बीच तनावपूर्ण संबंध, कश्मीर विवाद, दोनों देशों में अल्पसंख्यकों की स्थिति–ये सभी विभाजन की विरासत हैं। विभाजन ने दोनों देशों की राष्ट्रीय पहचान को इस प्रकार परिभाषित किया कि 'दूसरे' के प्रति संदेह और शत्रुता उनका स्थायी अंग बन गई। सात दशक से अधिक समय बीत जाने के बाद भी दोनों देश सामान्य पड़ोसी संबंध स्थापित नहीं कर पाए हैं।

विभाजन का अध्ययन आज भी प्रासंगिक है क्योंकि यह हमें सिखाता है कि सांप्रदायिक राजनीति, ध्रुवीकरण और हिंसा के क्या परिणाम हो सकते हैं। यह हमें स्मरण कराता है कि राजनीतिक निर्णयों का भार आम लोगों को उठाना पड़ता है। नेता जो निर्णय लेते हैं, उनके परिणाम आम नागरिक भुगतते हैं। विभाजन इस बात का उदाहरण है कि कैसे राजनीतिक विफलताएँ मानवीय त्रासदी में बदल सकती हैं। सबसे महत्वपूर्ण, यह हमे बताता है कि इतिहास के घावों को भरने के लिए उन्हें स्वीकार करना और समझना आवश्यक है। उर्वशी बुटालिया के शब्दों में, 'केवल कहानियों को याद करके और सुनाकर ही प्रभावित लोग उपचार और विस्मरण की प्रक्रिया शुरू कर सकते हैं।'

अंतत:, विभाजन हमें यह भी सिखाता है कि विविधता में एकता संभव है और होनी चाहिए । जिस भारतीय उपमहाद्वीप में शताब्दियों तक विभिन्न धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों के लोग साथ रहे, वहाँ विभाजन एक त्रासदी थी जिसे टाला जा सकता था। यदि राजनीतिक नेतृत्व ने समझौते का रास्ता चुना होता, यदि ब्रिटिश शासन ने जल्दबाजी नहीं की होती, यदि सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काने की बजाय शांत किया गया होता–तो शायद इतिहास अलग होता । परंतु जो हुआ वह हुआ और अब हमारा कर्तव्य है कि हम इस इतिहास से सीखें, पीड़ितों की स्मृति को संरक्षित करें और भविष्य में ऐसी त्रासदियों से बचें । विभाजन की कहानी भयावह है, परंतु इसे भूलना उससे भी बड़ी भूल होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. जलाल, ए. (1985). द सोल स्पोक्समैन: जिन्नाह, द मुस्लिम लीग एंड द डिमांड फॉर पाकिस्तान. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 4.
2. चंद्रा, बी. (1988). इंडिया'ज स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस. पेंगुइन बुक्स, पृ. 479.
3. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 18.
4. जलाल, ए. (1985). द सोल स्पोक्समैन: जिन्नाह, द मुस्लिम लीग एंड द डिमांड फॉर पाकिस्तान. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 23.
5. चंद्रा, बी. (1988). इंडिया'ज स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस. पेंगुइन बुक्स, पृ. 485.
6. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 45.
7. जलाल, ए. (1985). द सोल स्पोक्समैन: जिन्नाह, द मुस्लिम लीग एंड द डिमांड फॉर पाकिस्तान. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 57.
8. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 82.
9. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 35.
10. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 126.
11. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 68.
12. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 134.
13. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 87.
14. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 145.
15. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 112.
16. चटर्जी, जे. (1994). बंगाल डिवाइडेड: हिंदू कम्यूनलिज्म एंड पार्टिशन, 1932–1947. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.167.

17. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.156.
18. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 145.
19. पांडेय, जी. (2001). रिमेम्बरिंग पार्टिशन: वायलेंस, नेशनलिज्म एंड हिस्ट्री इन इंडिया. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 89.
20. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.168.
21. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 178.
22. जलाल, ए. (1985). द सोल स्पोक्समैन: जिन्नाह, द मुस्लिम लीग एंड द डिमांड फॉर पाकिस्तान. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 256.
23. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.189.
24. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ.203.
25. पांडेय, जी. (2001). रिमेम्बरिंग पार्टिशन: वायलेंस, नेशनलिज्म एंड हिस्ट्री इन इंडिया. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 156.
26. खान,वाई. (2007). द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान. येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.198.
27. बुटालिया, यू. (1998). द अदर साइड ऑफ साइलेंस: वॉयसेज फ्रॉम द पार्टिशन ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, पृ. 267.

****